बिंभाधर प्रधान

वी

ओरीसा राज्य।

[बी. पी. सिन्हा, जाफर इमाम और चंद्रसेखर अययर, जे. जे.]

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का अधिनियम एक्स. एल. वी.), धारा 120 -बी-आपराधिक साजिश-मामला जहा षड्यंत्र के अपराध के लिए जिन व्यक्तियो पर मुकदमा चलाया गया उनमे से बाकी अभियुक्तों के बरी होने के बाद केवल एक व्यक्ति अपराध से संबंधित था और वह मामला जहां मुकदमे में रखे गए व्यक्तियों के अलावा निष्कर्षों पर सरकारी गवाह था जिसने खुद को और कई अन्य अभियोजन गवाहों को साजिश के बारे में गोपनीय होने के रूप में फंसाया था-दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के बीच अंतर (1898 का अधिनियम 5), धारा 225 और 537-आरोप में सरकारी गवाह के नाम का उल्लेख करने में चूक क्या न्याय की विफलता हुई साजिश के लिए केवल एक व्यक्ति को दोषी ठहराने में रिकॉर्ड पर असंगति-अंग्रेजी और भारतीय कानून-दोनों के बीच का अंतर।

धारा 120-बी, 409,477-ए और 109, आई. पी. सी. मे सरकार को धोखा देने की दृष्टि से आपराधिक साजिश, सरकारी संपत्ति के संबंध में आपराधिक न्यासभंग और खातों में जालसाजी के अपराध के लिए अपीलार्थी व चार अन्य का विचारण सहायक सत्र न्यायाधीश सभलपुर के

यहा चला । अपीलकर्ता जिला खाद्य उत्पादन अधिकारी था और अन्य चार आरोपी व्यक्ति अपीलकर्ता के अधीन कृषि उप-पर्यवेक्षक थे और एक अन्य कृषि उप-पर्यवेक्षक पी. की जाँच मुकदमे में एक अनुमोदक के रूप में की गई थी। सहायक सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को तीनों आरोपों के तहत दोषी ठहराया लेकिन चार उप-पर्यवेक्षकों को संदेह का लाभ देते हुए बरी कर दिया।

उच्च न्यायालय ने अपील में धारा 409 और 477-ए, आई. पी. सी. के तहत आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की अपील को स्वीकार कर लिया। लेकिन धारा 120-बी, आई. पी. सी.के तहत साजिश के आरोप के संबंध में उनकी दोषसिद्धि और सजा को बरकरार रखा, यह देखते हुए कि उस आरोप के संबंध में सरकारी गवाह द्वारा दिए गए साक्ष्य को अन्य स्वतंत्र लोगों से पुष्टि मिली। सर्वोच्च न्यायालय में विशेष अनुमति द्वारा अपील पर विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह था कि क्या टोपन दास बनाम बॉम्बे राज्य ([1955] 2 एस. सी. आर. 881) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए वर्तमान मामले को शासित किया कि अपीलार्थी अभियुक्त व्यक्तियों में से एकमात्र व्यक्ति था जिसे धारा 120 -बी, आई. पी. सी. के तहत साजिश के अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था।

अभिनिर्धारित (i) कि तोप दास बनाम बम्बई राज्य का मामला वर्तमान मामले से स्पष्ट रूप से अलग था क्योंकि उस मामले में केवल वे

व्यक्ति जिन पर साजिश के अपराध का आरोप लगाया गया था, वे मुकदमे में रखे गए व्यक्ति थे। न तो कोई आरोप था और न ही कोई सबूत सामने आ रहा है कि कोई अन्य व्यक्ति हालांकि मुकदमे में नहीं रखा गया था, अपराध से संबंधित था। उस मामले के निष्कर्षों पर, केवल एक व्यक्ति, बाकी अभियुक्तों के बरी होने के बाद, अपराध से संबंधित था और धोखाधड़ी के आरोप में दोषी ठहराया गया था। चूंकि किसी व्यक्ति को स्वयं के साथ अपराध करने की साजिश रचने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस आशय को प्रभावी बनाया कि निष्कर्षों और साक्ष्य के साथ-साथ उस मामले में आरोप पर भी दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है। लेकिन निचली अदालतों के निष्कर्षों पर तत्काल मामले में, मुकदमे में रखे गए व्यक्तियों के अलावा, एक सरकारी गवाह था जिसने खुद को अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ समान रूप से फंसाया और कई अन्य अभियोजन पक्ष के गवाहों को साजिश के लिए गुप्त होने के रूप में बताया। और इसलिए वर्तमान मामला तोपान दास बनाम बम्बई राज्य के मामले में समान नहीं था।।

(ii) वर्तमान मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ पर धारा 225 सीआरपीसी के प्रावधान स्पष्ट रूप से लागू थे। यह नहीं दिखाया गया था कि कैसे धारा 120 -बी, आई. पी. सी के आरोप मे सरकारी गवाह के नाम का उल्लेख करने में हुई चूक ने अपीलार्थी को गुमराह किया था या न्याय की विफलता का कारण बना था।

(iii) धारा 537 दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान मामले के तथ्यों पर समान रूप से लागू होते थे। चूंकि अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष आरोप में कथित अवैधता या अनियमितता के संदर्भ में मुद्दा नहीं उठाया है, इसलिए उस धारा के स्पष्टीकरण को लागू करते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि आरोप में चूक न्याय की विफलता का कारण नहीं थी।

यह तर्क कि कथित साजिशकर्ता को बरी करने के साथ अपीलार्थी के खिलाफ दोषी होने का कोई निर्णय नहीं दिया जा सकता था, क्योंकि निर्णय को जहां तक यह कहने के बराबर माना जाएगा कि अपीलार्थी और अन्य लोगों के बीच एक आपराधिक समझौता था और उनके और उसके बीच कोई नहीं था, अपीलार्थी का दोषसिद्धी एक समान प्रतिकूलता के बराबर होगी क्योंकि एक कथित साजिशकर्ता को बरी करने के बारे में अंग्रेजी कानून का नियम जब साजिश को केवल दोनों के बीच कहा जाता था, तो यह अभ्यास और प्रक्रिया के नियम पर आधारित होता है, अर्थात् रिकॉर्ड के सामने यह विरोध या विरोधाभास किसी दोषसिद्धि को रदद करने का आधार हे लेकिन इस तरह की प्रतिकूलता भारत में दोषसिद्धि को रद्द करने के लिए अपने आप में पर्याप्त आधार नहीं है जहाँ मामला अपराध और अपराधी को न्याय के कटघरे में लाने की प्रक्रिया दोनों के बारे में वैधानिक कानून द्वारा शासित होता है। भारत में वैधानिक कानून में

अभिलेख में प्रतिकूलता के आधार पर दोषसिद्धि मे हस्तक्षेप को उचित ठहराने का कोई प्रावधान नहीं है।

तोपान दास बनाम बॉम्बे राज्य ([1955] 2 एस. सी. आर. 881) क्वीन वी. मैनिंग ([1883] 12 क्यू. बी. डी. 241), द क्वीन बनाम थॉम्पसन([1851] 16 प्र. 832), द किंग बनाम प्लमर ([1902] 2 के. बी. 339), कन्नंगार अराचिगे धर्मसेना बनाम किंग ([1951] ए. सी. 1), I.जी. सिंगलटन बनाम किंग एम्परर ([1924] 29 सी. डब्ल्यू. एन. 260), दलीप सिंह बनाम पंजाब राज्य ([1954] एस. सी. आर. 145) और कपिलदेव सिंह बनाम किंग ([1949-50] एफ. सी. आर. 834), संदर्भित।

आपराधिक अपील क्षैत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या 49/1954

सन् 1922 के सत्र विचारण सं. 7/4 (5) में संबलपुर सुंदरगढ़ में सहायक सत्र न्यायाधीश के न्यायालय के 14 नवंबर 1952 के निर्णय और आदेश से उत्पन्न 1952 की आपराधिक अपील सं. 108 में कटक में उड़ीसा उच्च न्यायालय के 7 अक्टूबर, 1953 के निर्णय और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील।

अपीलार्थी की ओर से एस. सी. इसाक्स, आर. पटनायक और आर. सी. प्रसाद। उत्तरदाता की ओर से पोरस ए मेहता और पी. जी. गोखले।

13 मार्च 1956, न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया थाः-

सिन्हा जे.-विशेष अनुमति द्वारा इस अपील में मुख्य प्रश्न यह है कि क्या टोपन दास बनाम राज्य बोम्बे (1) के मामले में पारित इस न्यायालय का निर्णय इस मामले को भी नियंत्रित करता है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत षडयंत्र का अपराध के विचारण मे अभियुक्तों में से अपीलार्थी एकमात्र व्यक्ति है, जिसे दोषी ठहराया गया है। मुद्दा निम्नलिखित तरीके से उत्पन्न होता हैः

अपीलार्थी और चार अन्य पर संबलपुर के सहायक सत्र न्यायाधीश के समक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी, 409,477-ए और 109 के तहत अपराधों के लिए मुकदमा चलाया गया। आपराधिक षड्यंत्र, सरकारी संपत्ति के संबंध में आपराधिक न्यासभंग, और सरकार को धोखा देने की दृष्टि से खातों का जालीकरण। अपीलार्थी संबलपुर में जिला खाद्य उत्पादन अधिकारी था, और अन्य चार अभियुक्त अपीलार्थी के अधीन अपने-अपने क्षेत्रों के प्रभारी कृषि उप-पर्यवेक्षक थे। ऐसे ही एक अन्य कृषि उप-पर्यवेक्षक बरगढ़ केंद्र में पीताबास साहू थे। मुकदमे में उनसे पी डब्ल्यू. 25 के रूप में पूछताछ की गई और जिसे इसके बाद अनुमोदनकर्ता के रूप में संदर्भित किया जाएगा। अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि सरकार द्वारा शुरू की गई ग्रो मोर फूड योजना को आगे बढ़ाने के लिए खाद्य फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के उद्देश्य से कृषको को तेल केक की आपूर्ति पर सब्सिडी देने का निर्णय लिया गया था। किसानों को इस किस्म की खाद

की आपूर्ति 4-4-0 प्रति माड रुपये में की जानी थी। हालांकि सरकार को 7-12-0 प्रति माड रुपये खर्च करने पड़े।। अपीलार्थी ने कृषि उप-पर्यवेक्षकों सहित अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ मिलकर किसानों को तेल केक की खरीद और आपूर्ति के लिए उनके निपटान में रखे गए धन का दुरुपयोग करने की साजिश रची। खरीदे जाने वाले तेल केक की मात्रा को बढ़ाने के लिए, उन्होंने इसकी खरीद और वितरण के झूठे लेन-देन, वाउचर कूट रचित लेखे दिखाए । इस प्रकार उन पर 4,943-4-0 सरकारी धन रुपये की राशि का दुरुपयोग करने का आरोप लगाया गया।

अभियोजन पक्ष की ओर से मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य की एक बड़ी मात्रा पेश किया गया था। मुकदमे में सहायता करने वाले तीन मूल्यांकनकर्ताओं की राय थी कि कोई भी आरोपी दोषी नहीं था। विद्वान सहायक सत्र न्यायाधीश ने मूल्यांकनकर्ताओं से सहमति व्यक्त करते हुए उपरोक्त चार कृषि उप-पर्यवेक्षकों को संदेह का लाभ देते हुए सभी आरोपों से बरी कर दिया। लेकिन मूल्यांकनकर्ताओं के साथ असहमति में उन्होंने अपीलार्थी को सभी आरोपों के तहत दोषी ठहराया और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत साढ़े चार साल के कठोर कारावास और 2,000 रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई। और संहिता की धारा 120-बी और 477-ए के तहत प्रत्येक धारा मे दो-दो साल के कठोर कारावास की सजा सुनायी । सभी सजाए साथ साथ चलेगी। विद्वत विचारण न्यायाधीश ने अपने निर्णय के दौरान इस प्रकार टिप्पणी कीः

" अतः ऊपर चर्चा किए सभी साक्ष्यों पर विचार करते हुए, मैंने पाया कि अभियोजन पक्ष ने अपने मामले को पूरी तरह से साबित कर दिया है कि आरोपी बिंबधर प्रधान, D.F.P.O ने सरकारी धन का गबन करने की साजिश रची है। उन्होंने यह भी साबित कर दिया है कि उसे पिताबास साहू की सक्रिय सहायता मिली है और उसकी सहायता से 4,943-4-0 रूपये की सरकारी धन का गबन किया है और उस कार्य में उसने गलत प्रविष्टियाँ करके सरकारी अभिलेखों मे हेरफेर करने में पीताबास साहू की सक्रिय रूप से मदद की है। इसलिए उनके खिलाफ ये तीनों आरोप निर्णायक रूप से साबित हुए हैं। जहाँ तक अन्य अभियुक्त व्यक्तियों का संबंध है, मैं पहले ही कह चुका हूँ कि वे काफी कम अनुभवी हैं और इन अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ साक्ष्य की संदिग्ध प्रकृति है और प्रथम अभियुक्त और अन्य अभियुक्तों के बीच की स्थिति पर विचार करते हुए, मैं इन चार अभियुक्त व्यक्तियों को संदेह का लाभ देता हूँ, हालांकि मैं इस मामले में उनके आचरण को स्वीकार नहीं करता।

ऊपर दिए गए मेरे निष्कर्षों के अनुसार, मैं यहां बता सकता हूं कि यह एक ऐसा मामला है जिसमें हम एक व्यक्ति जो कृषि के पूरे प्रशासन का प्रभारी हैं और के एक

जिले के विकास जी. एम. एफ. है, ने न केवल भ्रष्ट तरीकों से सरकारी धन का गबन करके उसके अपने हाथों को दूषित कर दिया है, बल्कि इस काम को संभालने वाले और उसके अधीन कार्यरत युवाओं का करियर खराब करके उस विभाग के पूरे प्रशासन में भ्रष्टाचार भी ला दिया है।"

अपीलार्थी ने उड़ीसा के उच्च न्यायालय में अपील की। उस न्यायालय की एक खंड पीठ ने अपील को अनुमति दी। उसकी अपील और भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477-ए के तहत उसकी दोषसिद्धि और सजा को अपास्त कर दिया, लेकिन संहिता की धारा 120-बी के तहत साजिश का आरोप मे उनके दोषसिद्धि और सजा को बरकरार रखा। हमें भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और 477-ए के तहत आरोपों के संबंध में अपीलार्थी को बरी करने के उच्च न्यायालय के निष्कर्षों के संबंध में व अन्य चार अभियुक्तों को बरी करने के संबंध में निचली अदालत की शुद्धता में प्रवेश करने की आवश्यकता नहीं है। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि हालांकि अपीलांट ने तेल केक की खरीद पर रियायत देने की दृष्टि से 27,000 रुपये की राशि सरकारी कोषागार से निकाली। परन्तु यह साबित नहीं हुआ था कि अपीलार्थी को उक्त् राशि न्यस्त की गयी था। इसलिए उनके खिलाफ धारा 409 के तहत आरोप विफल हो गया। जहां तक धारा 477-ए के तहत आरोप का संबंध है, उच्च अदालत ने उन्हें इस आधार पर बरी कर दिया कि जिन दस्तावेजों को

झूठा बताया गया था, वो बड़ी संख्या में थे,जिनका आरोप में उल्लेख नहीं किया गया था और एक अस्पष्ट कथन कि "खाते, नकद पुस्तकें, स्टॉक बुक, छोटी नकद बिक्री रजिस्टर, नकद ज्ञापन, किसानों से आवेदन, रसीदें, बिल, वाउचर, कागजात, दस्तावेज, पत्र, पत्राचार, आदि को गलत बताया गया था", किया गया।

धारा 120 -बी के तहत साजिश के आरोप के संबंध में उच्च न्यायालय ने कहा कि आरोप को साबित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण गवाह उपरोक्त अनुमोदन (पी. डब्ल्यू. 25) था जिसने 23 या 25 सितंबर 1947 को अपीलार्थी और खुद सहित अन्य उप-पर्यवेक्षकों के बीच साजिश का पूरा विवरण दिया था, जिसका उद्देश्य नकली खरीद और बड़ी मात्रा में तेल केक का फर्जी वितरण दिखाना था। यह भी देखा गया है कि" अभियोजन पक्ष द्वारा जांचे गए अधिकांश गवाह ने पिताबास के साक्ष्य की पुष्टि की है जो स्वयं साजिश में सहयोगी हैं। उच्च न्यायालय ने पाया कि उस साजिश के संबंध में सरकारी गवाह द्वारा दिए गए साक्ष्य को अन्य स्वतंत्र गवाहों से पर्याप्त पुष्टि मिली। साक्ष्य प्रस्तुत करने के बाद उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष दर्ज किएः

" अपीलार्थी के प्रमुख प्रस्तावक होने और पूरी धोखाधड़ी के पीछे मस्तिष्क होने के बारे में अनुमोदक साक्षी की साक्ष्य की मजबूती से पुष्टि हुई है। यह वही था जो अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग करना चाहता था और अपने अधीनस्थों को तेल केक की खरीद और

वितरण के झूठे आंकड़े दिखाने में उसके साथ शामिल होने के लिए राजी करना चाहता था।"

और अंत में उच्च न्यायालय निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुचा कि

" इसलिए मेरी राय है कि अपीलार्थी द्वारा तेल केक की खरीद व वितरण को गलत दिखाकर अपने सभी अधीनस्थों को राजकोष से निकाली गई राशि आपराधिक न्यासभंग करने के उद्देश्य से उसके साथ शामिल होने के लिए राजी करने की साजिश में अग्रणी भूमिका के बारे में अनुमोदक साक्षी का कथन सच है। अपीलार्थी की एक मात्र लापरवाह वरिष्ट अधिकारी होने से उसे उसके बेईमान अधीनस्थो द्वारा धोखा दिये जाने के सम्बधं मे दी गई उसकी साक्ष्य की स्वतत्र संपुष्टि असंगत हैं । तब यह आग्रह किया गया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत आरोप में अपराध करने की तारीख अक्टूबर 1947 का महीना बताई गई थी, जबकि पी. डब्ल्यू. 5 के साक्ष्य के अनुसार, साजिश 23 और 25 सितंबर 1947 के बीच बारगढ़ में हुई थी। तिथि में यह विसंगति महत्वहीन है और इसने किसी भी तरह से अपीलार्थी को प्रभावित नहीं किया है।"

भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत अपीलार्थी को दोषसिद्धि और सजा के समवर्ती आदेशों से, उसे इस न्यायालय में अपील करने के लिए विशेष अनुमति दी गई थी। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने अपील के समर्थन में निम्नलिखित मुद्दे उठाए हैंः

1. कि अपीलार्थी के अलावा साजिश के अपराध के लिए आरोपित सभी व्यक्तियों को दोषमुक्त किये जाने से उस आरोप के संबंध में अपीलार्थी की दोषसिद्धि और सजा को कानूनी रूप से बनाए नहीं रखा जा सकता है;

2. कि अपीलार्थी को धारा ४०९, ४७७ ए आइर्पीसी के सारभूत आरोपो से बरी किया गया है, ऐसे मे उन्ही अपराधो के षडयंत्र के आरोप मे उसे दोषसिद्घी नही किया जा सकता है।

3. कि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य पर अन्य अभियुक्तों के खिलाफ अविश्वास होने के कारण, साजिश के आरोप के अपीलार्थी को दोषी ठहराने के लिए उन्हीं साक्ष्यों पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए था;

4. कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 के प्रावधानों का पूरी तरह से पालन नहीं किया गया था क्योंकि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य में महत्वपूर्ण परिस्थितियों में अपीलार्थी को उस धारा के तहत अदालत द्वारा उसकी परीक्षा में नहीं रखा गया था। हमारी राय में, इनमें से किसी भी

विवाद में कोई सार नहीं है और हम अपने निष्कर्षों के लिए अपने कारण देने के लिए आगे बढ़ते हैं।

अपीलार्थी की ओर से उठाए गए पहले विवाद के समर्थन में इस न्यायालय का हालिया निर्णय टोपन दास बनाम बम्बई राज्य (1) मे मजबूत निर्भरता रखी गई थी।

और निर्णय उस मामले में निर्भर थे। मामले, द क्वीन बनाम मैनिंग (२), द क्वीन बनाम थॉम्पसन (3): और किंग वी प्लमर (४) को इस तर्क के समर्थन में उद्धृत किया गया था कि जहां एक को छोड़कर सभी अभियुक्त व्यक्तियों को साजिश के आरोप से बरी कर दिया जाता है, केवल उस आरोप पर एक की दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है। इस संबंध में कन्नंगार अराचिगे धर्म सेना बनाम किंग(5) के मामले में प्रिवी काउंसिल की न्यायिक समिति का हालिया निर्णय का भी उल्लेख किया जा सकता है, हालांकि बार में इसका उल्लेख नहीं किया गया था। उस मामले में न्यायिक समिति ने निर्णय दिया कि जहां केवल दो व्यक्ति साजिश के आरोप में शामिल हैं, यदि एक के संबंध में एक नए मुकदमे का निर्देश दिया जाना है, तो दोनों के संबंध में आदेश दिया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसे मामले में एकमात्र संभावित निष्कर्ष यह था कि या तो दोनों दोषी थे या न ही दोनों अपराध के दोषी थे। अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के हालिया निर्णय पर इतनी दृढ़ता से भरोसा किया गया है कि एक समान नियम निर्धारित किया गया है, लेकिन स्पष्ट रूप से यह मामला उस मामले से

बिल्कुल अलग करने योग्य था , क्योंकि उस मामले में केवल उन व्यक्तियों पर मुकदमा चलाया गया था जिन पर साजिश के अपराध का आरोप लगाया गया था। न तो एेसा कोई आरोप लगा था और न ही कोई सबूत सामने आया था कि किसी अन्य व्यक्ति जिन पर मुकदमा नहीं चलाया गया था, वे अपराध से संबंधित थे। उन परिस्थितियों में इस न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि षंडयत्र के अपराध के लिए यह साबित करना आवश्यक है कि दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच अपराध करने की सहमति थी। उस मामले के निष्कर्षों पर केवल एक व्यक्ति, बाकी अभियुक्तों के बरी होने के बाद अपराध से संबंधित था और साजिश के आरोप में दोषी ठहराया गया। चूँकि किसी व्यक्ति को अपराध करने के लिए अपने साथ साजिश रचने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, इसलिए इस न्यायालय ने इस तर्क को प्रभावी बनाया कि निष्कर्षों और साक्ष्य,और उस मामले में आरोप पर दोषसिद्धि को बरकरार नहीं किया जा सकता । लेकिन हस्तगत मामले में, निचली अदालतों के निष्कर्षों पर जैसा कि पहले से ही संकेत दिया गया है, मुकदमे में रखे गए व्यक्तियों के अलावा, एक सरकारी गवाह था जिसने खुद को अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ समान रूप से फंसाया और कई अन्य अभियोजन पक्ष के गवाहों को साजिश के बारे में गुप्त होने के रूप में बताया। अनुमोदक के साक्ष्य को निचली अदालतों द्वारा गैरकानूनी समझौते के रूप में भौतिक रूप से पुष्ट किया गया है। उसे मामले के तथ्यों का पूर्ण और सच्चा बयान देने

की शर्त पर माफी दी गई थी और एक सरकारी गवाह के रूप में उसकी जांच की गई थी, जिसके साक्ष्य पर मुख्य रूप से आरोपी के खिलाफ मामला आधारित था। जैसा कि ऊपर बताया गया है, उसके साक्ष्य का समर्थन तेल केक में विक्रेताओं द्वारा किया गया था जो उस वस्तु की आपूर्ति करते थे जो साजिश का विषय था। यह पहले से नहीं कहा जा सकता है कि यह मामला ऊपर निर्दिष्ट इस न्यायालय के हाल के फैसले के साथ है।

लेकिन अपीलार्थी की ओर से यह तर्क दिया गया कि उस पर केवल अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ साजिश का आरोप लगाया गया था, न कि सरकारी गवाह के साथ किसी साजिश का। धारा 120-बी के तहत आरोप इन शर्तों में हैः"

> "सबसे पहले, कि आप, 1947 के अक्टूबर महीने में या उसके आसपास, संबलपुर जिले में हेमचंद्र आचार्य और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों को अवैध माध्यमों से एक अवैध कार्य करना या करवाने के लिए सहमत हुए और यह कि आपने उक्त सहमति के अनुसरण में कुछ कार्य किए, अर्थात् 409 आई. पी. सी. के तहत आपराधिक न्यासभंग का अपराध। और धारा 477 के तहत खातों का जालीकरण। जो दो वर्ष से अधिक समय तक के कठोर कारावास से दंडनीय और

इस प्रकार के 120 -बी, आई. पी. सी के अनुसार दंडनीय अपराध कारित किया, और सत्र न्यायालय के संज्ञान में है।"

इस प्रकार आरोप के शब्दों से यह प्रतीत होगा कि अनुमोदक को षड्यंत्रकारियों में से एक के रूप मे विशेष रूप से नामित नहीं किया गया था, जब तक कि उसे अन्य अभियुक्त की श्रैणी मे नही लाया जा सकता था। कुछ कहना होगा कि वे शब्द क्या दर्शाते हैं, क्या अनुमोदनकर्ता को भी उस विवरण में शामिल किया गया था। अपीलार्थी के वकील ने तर्क दिया कि उन्होंने ऐसा नहीं किया। राज्य सरकार के वकील ने इसके विपरीत तर्क दिया। इंग्लैंड में अभियोग के तीन भाग होते हैंः (1) प्रारम्भ, (2) अपराध का विवरण, और (3) अपराध का विवरण। बहुत शुरुआती समय से अभियोग का अंग्रेजी कानून बहुत तकनीकी नियमों पर आधारित रहा है। उन नियमों को अब अभियोग अधिनियम, 1915 (5 और 6 जॉर्ज 5, अध्याय 90) द्वारा संहिताबद्ध किया गया है। न्याय प्रशासन द्वारा संशोधित अधिनियम के नियम 2 (अनुसूची I) में दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XIX में निर्धारित नियमों का पालन करें। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 221 की अपेक्षा है कि आरोप उस अपराध का उल्लेख करें जिसके लिए अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है, अपराध का विशिष्ट नाम देते हुए, यदि ऐसा नाम कानून द्वारा दिया गया है जो अपराध पैदा करता है, जिसका अर्थ इस मामले में आपराधिक अपराध है। भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ए द्वारा परिभाषित षड्यंत्र। धारा का नामकरण, दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 221 की उप-धारा (5) के तहत, एक बयान के बराबर है कि अपीलार्थी के खिलाफ आरोपित आपराधिक साजिश के अपराध का गठन करने के लिए कानून द्वारा आवश्यक हर कानूनी शर्त को पूरा किया गया था। संहिता की धारा 222 की अपेक्षा है कि कथित अपराध के समय और स्थान के बारे में विवरण, और वह व्यक्ति (यदि कोई हो) जिसके विरुद्ध, या वह वस्तु (यदि कोई हो) जिसके संबंध में अपराध किया गया था, बताया जाएगा। यह उल्लेखनीय है कि वह खंड जिसके लिए अपराध के विवरण की आवश्यकता होती है कथन में आगे यह आवश्यकता नहीं है कि षड्यंत्र जैसे अपराध में सह-षड्यंत्रकारियों के नाम भी उल्लेख किए जाने चाहिए। इसलिए इंग्लैंड में यह पर्याप्त है यदि अभियोग में कहा गया है कि अभियुक्त ने अन्य अज्ञात व्यक्तियों के साथ आपराधिक षड्यंत्र का अपराध किया गया था हालांकि भारत में स्टैट`यूट कानून इसे अनिवार्य नहीं बनाता है कि आपराधिक धोखाधड़ी के अपराध में संबंधित व्यक्ति किसी विशेष मुकदमे में आरोपित व्यक्ति या व्यक्ति, से विशेष रूप से नामित किया जाना चाहिए यह हमेशा सलाह दी जाती है कि आदेश मे उन विवरणों को जरूर देना चाहिए जो अभियुक्त को युक्तयुक्त रूप से यह सूचित करे कि उस पर षंडयंत्र का अन्य इन, इन व्यक्तियो (नामित व्यक्ति) तथा साथ ही अनाम व्यक्ति भी, मिलकर अपराध कारित करने का आरोप है। इस मामले में आरोप पाँच अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध धारा 120-बी, भारतीय दंड संहिता, के तहत केवल उन पाँच व्यक्तियों को

साजिशकर्ताओं के रूप में नामित किया गया और अनुमोदक को भी गोपनीय होने के रूप हटा दिया गया । षड्यंत्र जिन चार अभियुक्त् (जिन्हें निचली अदालत ने बरी कर दिया है जैसा कि ऊपर बताया गया है) पर लगे आरोप के सम्बधं मे यह स्पष्ट बाहर आया है कि इसमें कहा गया हैः

> " कि आप, अक्टूबर के महीने में या उसके आसपास 1947 संबलपुर जिले में, बिम प्रधान से अवैध तरीकों से एक अवैध कार्य करना या करवाने के लिए सहमत हुए।"
>
> हम मुकदमे के अभिलेखों के संदर्भ में पाते हैं अदालत ने कहा कि मुकदमे की विशेषता नहीं है पूरी तरह से या सावधानीपूर्वक निरीक्षण। आरोप में दिए गए अपराध कि तारीख साक्ष्य मे प्रकट हुई तारीख से अलग है जैसा कि उच्च न्यायालय, ने पाया कि वह गलती थी जो अभियुक्त के प्रति कोई पूर्वाग्रह पैदा नहीं करती । इसी तरह, धारा 477-ए के तहत आरोप, जैसा कि उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया गया था, प्रर्याप्त विशिष्टयो के साथ नहीं था। जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को अपील पर उस आरोप से बरी करना पड़ा। यदि धारा 120-बी के तहत आरोप में "और अन्य व्यक्ति, ज्ञात या अज्ञात" शब्द जोड़े गए होते, तो अपील की ओर से शिकायत का कोई आधार नहीं होता।

लेकिन फिर भी, हमारी राय में, धारा 225, दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान वर्तमान के तथ्यों और परिस्थितियों के लिए स्पष्ट रूप से लागू है। यह हमें नहीं लगता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत आरोप में सरकारी गवाह के नाम का उल्लेख करने मे चूक, अपीलार्थी को गुमराह किया है या न्याय की विफलता का कारण बना है। अभियोजन पक्ष का पूरा मामला, जैसा कि शिकायत की याचिका के संदर्भ में स्पष्ट है, यह है कि अपीलकर्ता खाद्य विभाग में अपने अधीनस्थों के साथ अधिक खाद्य फसलें उगाने के लिए किसानों को खाद देने में मदद करने के उद्देश्य से तेल-केक की खरीद के लिए आवंटित धन के दुरुपयोग की साजिश रची थी। सरकारी गवाह हर समय तस्वीर में बहुत अधिक रहा है और वास्तव में, जैसा कि नीचे दी गई अदालतों द्वारा पाया गया है, उसका साक्ष्य अभियोजन मामले में मुख्य मुद्दा है। बेशक, अन्य पुष्टिकारक साक्ष्य हैं, जैसा कि नीचे दिए गए न्यायालयों के निर्णयों में बताया गया है। धारा 537 के प्रावधान इस मामले की ओर समान रूप से आकर्षित हैं। उस धारा के प्रावधानों के संदर्भ में यह ध्यान रखना उचित है कि हालांकि अन्य अभियुक्त को निचली अदालत ने बरी कर दिया था और हालांकि वह उच्च न्यायालय में एकमात्र अपीलकर्ता था, लेकिन उसने उस अदालत के समक्ष आरोप में कथित अवैधता या अनियमितता के संदर्भ में मुद्दे नहीं उठाए। अतः इस मामले में उस धारा के स्पष्टीकरण को लागू

करते हुए, यह आग्रह नहीं किया जा सकता है कि आरोप में चूक ने न्याय की विफलता का कारण बना है।

लेकिन अपीलार्थी के विद्वान वकील ने पेज 243 क्वीन वी मैनिंग (1) में श्री न्यायमूर्ति मैथ्यू की टिप्पणियों पर हमारा स्पष्ट ध्यान दिया। कि यह "कानून का एक अनिवार्य नियम" है कि "साजिश के लिए आरोप के मामले में जहां दो प्रतिवादी हैं, मुद्दा उठाया गया है कि क्या दोनों पुरुष दोषी हैं या नहीं और यदि जूरी दोनों में से किसी एक के अपराध के बारे में संतुष्ट नहीं है, तो दोनों को ही दोषमुक्त ठहराया जाना चाहि"। लेकिन लॉर्ड कॉलरिज, सी. जे., जिनका निर्देशन उस मामले में जूरी के लिए निर्णय का विषय इसे श्री न्यायमूर्ति जितना उच्च नहीं रखता था मैथ्यू, लेकिन इसे " अभ्यास के स्थापित नियम" समझते थे ।

किंग बनाम प्लमर (1) के मामले में अपीलार्थी विद्वान वकील द्वारा विशवास रखा गया था ।, जिसमें यह देखा गया है कि एकमात्र कथित षड्यंत्रकारियों के बरी होने के साथ अपीलार्थी के खिलाफ दोषी होने का कोई फैसला पारित नहीं किया जा सका क्योंकि निर्णय को प्रतिकूल माना जाएगा, जहाँ तक यह कहने के बराबर होगा कि अपीलार्थी और अन्य लोगों के बीच एक आपराधिक समझौता था और उनके और उसके बीच कोई नहीं था। इसलिए यह तर्क दिया गया कि वर्तमान मामले जैसी स्थिति में, अपीलार्थी की दोषसिद्धि एक समान असगंति के बराबर होगी। आई. जी. सिंगलटन बनाम राजा-सम्राट (2) के मामले में न्यायमूर्ति मुखर्जी

द्वारा दिए गए कलकत्ता उच्च न्यायालय के एक फैसले में मामले के इस पहलू पर अच्छी तरह से चर्चा की गई है।। विद्वान न्यायाधीश ने वहाँ अंग्रेजी कानून का नियम कथित साजिशकर्ता के बरी होने के बारे में भारत में प्राप्त होने वाली स्थिति और इंग्लैंड में प्राप्त होने वाली स्थिति के बीच अंतर को इंगित किया हैजब षड्यंत्र को केवल दोनों के बीच और दोनों के संयुक्त मुकदमे में कहा जाता था, तो दूसरे को बरी करना अभ्यास और प्रक्रिया के नियम पर आधारित होता है, अर्थात्, अभिलेख के चेहरे पर वह असंगति या विरोधाभास दोषसिद्धि को निरस्त करने का आधार है। लेकिन इस तरह की असंगति अपने आप में भारत में किसी दोषसिद्धि को रद्द करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, जहां मामला अपराध और अपराधी को न्याय के दायरे में लाने की प्रक्रिया दोनों के बारे में वैधानिक कानून द्वारा शासित है। भारत में वैधानिक कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अभिलेख कि असंगति के आधार पर कि गई दोषसिद्धि के मामले मे एक हस्तक्षेप को उचित ठहराता हो। इसका मतलब यह नहीं है कि षडयंत्र के अपराध मे उसी साक्ष्य के आधार पर जिस पर दुसरे षडंयत्रकारी को बरी किया गया है, एक षडयंत्रकारी को दोषिसद्घ ठहराने मे असंगति पर अदालत अपनी आंखें बंद करनी हैं,। यदि मामला उतना ही सरल है, तो आम तौर पर अदालतों को दोषसिद्धि को दरकिनार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, जब रिकॉर्ड में एक के खिलाफ मामले को दूसरे के खिलाफ

अलग करने के लिए बिल्कुल कुछ भी नहीं था। ऐसा मामला था जिसका फैसला इस न्यायालय ने तोपान दास बनाम बम्बई राज्य (1) में किया था।

अपीलार्थी के विद्वान वकील ने हम पर यह मानने के लिए दबाव डाला कि साक्ष्य में प्रकट किए गए मामलों में, अपीलार्थी बरी होने का हकदार था क्योंकि उसके खिलाफ बनाए गए आरोप में सरकारी गवाह का कोई उल्लेख नहीं था। उन्होंने तर्क दिया कि जिस नियम पर अभियुक्त बरी होने का हकदार था, वह व्यवहार का नहीं बल्कि सिद्धांत का विषय था। तत्काल मामले में हम इस बात को लेकर आश्वस्त नहीं हैं कि निचली अदालत द्वारा सह-अभियुक्त को बरी करना कानूनी रूप से अच्छी तरह से स्थापित था या मामले में साक्ष्य द्वारा उचित था। निचली अदालत ने अभियोजन पक्ष की ओर से दिए गए सबूतों पर अविश्वास नहीं किया है। अभियुक्त को इसने केवल संदेह का लाभ दिया है जिसे उसने इस आधार पर बरी कर दिया कि जिनकी जाँच-पड़ताल नही हो सकती। लेकिन चूंकि उन बरी किए गए व्यक्तियों के खिलाफ मामला हमारे सामने नहीं है, इसलिए हमें मामले में आगे जाने की आवश्यकता नहीं है।

यह आगे विद्वान द्वारा तर्क दिया गया है अपीलार्थी के वकील ने कहा कि उच्च न्यायालय ने उसे आपराधिक न्यासभंग और दस्तावेजों को गलत साबित करने के दो मूल आरोपों के संबंध में बरी कर दिया था, इसलिए उसे आपराधिक साजिश के अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए था क्योंकि षडयंत्र उन्ही अपराधो के लिए था । यह कहना

इस तर्क का पर्याप्त जवाब है कि आपराधिक साजिश के अपराध में दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच आपराधिक अपराध करने के लिए समझौता होता है, भले ही आगे विचार करें कि क्या वे अपराध वास्तव में किए गए हैं या नहीं। साजिश का तथ्य ही अपराध का गठन करता है और यह मायने नहीं रखता कि गैरकानूनी समझौते के अनुसरण में कुछ किया गया है या नहीं। लेकिन इस मामले में निष्कर्ष यह है कि ऐसा नहीं है कि सरकारी धन का दुरुपयोग नहीं हुआ था न या कि खातों को गलत नहीं बनाया गया था। दस्तावेजों को गलत साबित करने से संबंधित धारा 477-ए के तहत आरोप विफल हो गया है क्योंकि उच्च न्यायालय ने पाया कि उस विशेष आरोप में पर्याप्त विवरण की कमी थी, जिससे आरोपी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के तहत आरोप को उच्च न्यायालय ने इस आधार पर खारिज कर दिया था कि "व्यावहारिक रूप से अपीलार्थी को 1500 टन तेल-केक की कीमत सौंपने का कोई सबूत नहीं था, जिसके एक बड़े हिस्से के बारे में कहा जाता था कि उसने गबन किया था।" उच्च न्यायालय का यह अभिवचन अपीलार्थी, जिसके हाथों में सरकारी धन का खर्च था, की आधिकारिक स्थिति के संदर्भ में कानूनी रूप से कितना अच्छी तरह से स्थापित है, यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिस पर हमें निर्णय देने की आवश्यकता है। यह इंगित करने के लिए पर्याप्त है कि निचली अदालतों द्वारा यह नहीं पाया गया है कि आपराधिक साजिश का उद्देश्य हासिल नहीं किया गया था। दूसरी तरफ साथ ही, उन निर्णयों

में पर्याप्त संकेत हैं कि साजिश का उद्देश्य काफी हद तक पूरा हो गया था। इसलिए यह माना जाना चाहिए कि इस विवाद में भी कोई सार नहीं है।

अपील की ओर से उठाया गया एक अन्य तर्क यह था कि अन्य अभियुक्तों को निचली अदालत द्वारा बरी किए जाने के बाद, अपीलार्थी को दोषी नहीं ठहराया जाना चाहिए था क्योंकि उन सभी के खिलाफ सबूत समान थे। अगर हम संतुष्ट होते कि अन्य चार अभियुक्त व्यक्तियों को बरी करने का फैसला पूरी तरह से सही था, तो इस तर्क में सिद्धांत के सवाल के रूप में नहीं बल्कि विवेक के मामले के रूप में बहुत बल होता। इस संबंध में दलीप सिंह बनाम पंजाब राज्य (1) के मामले में इस न्यायालय की टिप्पणियाँ और संघीय न्यायालय में कपिलदेव सिंह बनाम राजा (1) प्रासंगिक हैं। यह आवश्यक नहीं है कि आपराधिक साजिश के अपराध के लिए एक से अधिक व्यक्ति दोषी हों। यह पर्याप्त है यदि अदालत यह पता लगाने की स्थिति में है कि दो या दो से अधिक व्यक्ति वास्तव में आपराधिक साजिश में शामिल थे। यदि निचली अदालतें इस स्पष्ट निष्कर्ष पर आई थीं कि अभियोजन पक्ष की साक्ष्य अविश्वसनीय थी, तो निश्चित रूप से इस तरह के साक्ष्य के आधार पर कोई दोषसिद्धि नहीं हो सकती थी और सभी अभियुक्त समान रूप से बरी होने के हकदार होते। लेकिन इस मामले में यह स्थिति नहीं है क्योंकि हम नीचे दी गई अदालतों के फैसलों को पढ़ते हैं।

अंत में, यह तर्क दिया गया कि विद्वत विचारण न्यायाधीश द्वारा अपीलार्थी की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 परीक्षा की आवश्यकताओं का पूर्ण अनुपालन नहीं किया था। इस संबंध में दो बिंदुओं को ध्यान में रखने की मांग की गई है। सबसे पहले, यह तर्क दिया गया है कि हालांकि अन्य आरोपी जिन्हें निचली अदालत ने बरी कर दिया है, उनसे सरकारी गवाह पीताबास साहू के साथ साजिश के संदर्भ में पूछताछ की गई थी परन्तु, अपीलार्थी से ऐसा कोई सवाल नहीं पूछा गया था। यह सच है कि अदालत ने "अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ उसकी साजिश" के बारे में सवाल किया। पहले पक्षकारों के वकील इन शब्दों के महत्व के बारे में हमसे सहमत नहीं थे कि "अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के साथ षडयंत्र में"। अपीलार्थी की ओर से यह उल्लेख किया गया था कि उन्हें केवल अदालत के समक्ष वास्तव में मुकदमे का सामना कर रहे व्यक्तियों के पास भेजा जाता है, जबकि राज्य के वकील ने कहा कि उनके पास शिकायत की याचिका में नामित सभी अभियुक्तों का संदर्भ था, जिसमें सरकारी गवाह भी शामिल था। विभिन्न उच्च न्यायालयों के कई निर्णय कि एक सरकारी गवाह की स्थिति क्या है, क्या वह अभी भी एक अभियुक्त व्यक्ति बना हुआ है क्षमा प्रदान किए जाने के बाद या क्या वह केवल अभियोजन पक्ष की ओर से गवाह की स्थिति में है, हमारे सामने उद्धृत किया गया था। लेकिन हमें नहीं लगता कि इस मामले में इसका उच्चारण करने की आवश्यकता है क्योंकि हम, जैसा कि पहले ही संकेत दिया जा चुका है,

अपने निष्कर्ष पर आ गए हैं। कि धारा १२० बी आईपीसी के आरोप मे अप्रूवर का नाम विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नही किया है, जहा तक आरोप मे एक लोप है, दूसरा यह तर्क दिया कि पी. डब्ल्यू. 27 का साक्ष्य, जिन पर मुख्य रूप से निचली अदालतों में सरकारी गवाह की पुष्टि करने के लिए भरोसा किया गया था, विशेष रूप से अपीलार्थी के सामने नहीं रखा गया था, हालांकि सरकारी गवाह पीताबास साहू का साक्ष्य स्पष्ट रूप से उनके सामने रखा गया था। हमारी राय में, यह सामान्य रूप से नहीं है दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 के तहत अभियुक्त की जाँच में प्रत्येक व्यक्तिगत गवाह का साक्ष्य प्रस्तुत करना आवश्यक है। अपीलार्थी से सवाल किया गया था, "क्या आपको गवाहों के साक्ष्य पर कुछ कहना है?" यह, हमारी राय में, इस मामले की परिस्थितियों में यह दिखाने के लिए पर्याप्त है कि अभियुक्त का ध्यान अभियोजन पक्ष के साक्ष्य की ओर खींचा गया था। संहिता की उस धारा के प्रावधानों का पूर्ण अनुपालन किया है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और दृष्टिकोण पर निर्भर करना चाहिए। हमारी राय में, यह नहीं कहा जा सकता है कि जिस तरह से उससे पूछताछ की गई है, उससे आरोपी किसी भी तरह से पूर्वाग्रहग्रस्त रहा है।

अपीलकर्ता की ओर से उठाए गए सभी तर्क विफल रहे है, अपील को खारिज कर दिया जाना चाहिए।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्रीमती रचना वैष्णव आर जे एस द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।